अध्ययन सामग्री

बी॰ ए॰ पार्ट 2
प्रश्नपत्र – तृतीय
डॉ॰ मालविका तिवारी
सहायक प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
एच॰ डी॰ जैन कॉलेज
वी॰ कुं॰ सिं॰ वि॰, आरा

दशकुमारचरितम्

दण्डिनः पदलालित्यम्

'उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥'

संस्कृत साहित्य के परम्परासिद्ध समीक्षकों में दण्डी के विषय में भट्ट उद्भट की यह सूक्ति अत्यन्त प्रसिद्ध है । जिस प्रकार कालिदास की उपमाएं विश्रुत हैं, भारवि का अर्थगौरव प्रख्यात है उसी प्रकार दण्डी का पदलालित्य भी कवियों के लिए स्पृहा और सहृदयों के लिए निरन्तर आकर्षण और गौरव का विषय रहा है ।

काव्य – रचना एक अनुपम कला है । भाव और भाषा का जहाँ समुत्कृष्ट मणिकाञ्चन – संयोग सम्भव होता है, वहीं उस कला की चरम अभिव्यक्ति मानी जाती है । अतः भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से इस नैसर्गिक कला – रचना में उत्कर्ष प्राप्त करना एक कठोर साधना से ही सम्भव हो सकता है और इस साधना में उन्हीं महापुरुषों को सिद्धि और सफलता मिलती है, जिन्हें सरस्वती की विमल विभूति प्राप्त होती है । सचमुच यह काम साधक ऋषियों का है, साधारण जन का नहीं । तभी तो कहा गया है – 'नानृषिः कुरुते काव्यम् ।'

काव्य-कला कितनी कठोर साधना है इसे वस्तुतः वे ही समझ सकते हैं, जो सचमुच कवि-कर्म करनेवाले हैं —

'न हि वन्ध्या विजानीयाद् गुर्वीं प्रसववेदनाम्' की भाँति कवि-कर्म न करनेवाला दूसरा व्यक्ति इसका अनुमान ही नहीं कर सकता।

काव्य की आत्मा यदि अर्थ है तो शब्द उसका शरीर। दण्डी ने इसे बड़े ही रमणीय रूप में कहा है —

'शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।'

यह तो दण्डी का अपना दृष्टिकोण है। इसके अतिरिक्त पण्डित जगन्नाथ ने भी काव्य में शब्द या पद को बहुत महत्त्व दिया है। मम्मट के 'शब्दार्थौ' पर आपत्ति करते हुए उन्होंने कहा है कि काव्य का लक्षण 'शब्दार्थ' निष्ठ नहीं, केवल 'शब्दनिष्ठ' होना चाहिए — 'तस्माद्वेदशास्त्रपुराणलक्षणस्येव काव्यलक्षणस्यापि शब्दनिष्ठतैवोचिता'। इसीलिए उन्होंने रमणीयार्थ प्रतिपादक शब्द को ही काव्य कहा है — "रमणीयार्थप्रतिपादिकः शब्दः काव्यम्।" इस रमणीय अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए शब्द या पद का भी नितान्त रमणीय होना आवश्यक है।

कवि का सर्वस्व शब्द-भण्डार है, क्योंकि शब्दों के माध्यम से ही अलंकार और शब्द-समुद्र से ही भावरत्न निकाले जाते हैं। इसलिए जिस कवि को शब्द-साम्राज्य पर जितना अधिक आधिपत्य होगा, उसकी रचना उतनी ही सुन्दर एवं श्रुति-मनोहर होगी। काव्य-रचना में सरस शब्द-सौन्दर्य अर्थात् पदलालित्य को प्रमुख स्थान दिया जाता है। यदि काव्य में पद-लालित्य नहीं रहे तो भाव कितना ही समुत्कृष्ट क्यों न हो, वह मन को अनायास आकृष्ट नहीं कर सकता।

संस्कृत काव्य-संसार में शब्दों का कलात्मक कसीदा काढ़ने में जितना कृतकार्य शब्द-शिल्पी कविवर दण्डी हुए, उतना शायद ही कोई दूसरा कवि हुआ हो। दण्डी शब्द-संसार के सम्राट् थे। पद-समूह आज्ञाकारी अनुचर की तरह सतत

उनके पीछे चलते थे। एक पद की आवश्यकता पड़ने पर दस-दस ललित आनुप्रासिक पद अनायास उनके समक्ष उपस्थित हो जाते थे।

सरस आनुप्रासिक ललित पदों के शृंखला-बद्ध सुन्दर संस्थापन की जो अलौकिक कला दण्डी ने अपने गद्य-काव्य दशकुमारचरित में प्रदर्शित की है, उसकी बराबरी दूसरा कौन कर सकता है। तभी तो संस्कृत काव्य-जगत् में इनके पद-लालित्य की इतनी प्रशंसा है – 'दण्डिनः पदलालित्यम्।' दशकुमारचरित में इनकी काव्य-प्रतिभा चरम सीमा तक प्रस्फुटित हुई जान पड़ती है। इसको देखने से पता चलता है कि वे व्यावहारिक संस्कृत गद्य के एक सिद्ध-हस्त लेखक थे। दशकुमारचरित की शैली सरल एवं प्रासादिक है। इसकी भाषा नैसर्गिक एवं प्रवाहपूर्ण है, साथ ही मँजी हुई एवं मुहावरेदार भी। इनका गद्य शिष्ट, संयत, सजीव एवं व्यावहारिक है। इसके वाक्य प्रायः छोटे-छोटे हैं। लम्बे-लम्बे समासों का प्रायः यहाँ अभाव है। जहाँ सुबन्धु का गद्य 'प्रत्यक्षर श्लेषमय' है और बाण का गद्य 'सरस स्वरवर्णपदमय' वहाँ दण्डी का गद्य इन दोनों महाकवियों के गद्य से भिन्न है। दण्डी के गद्य में न तो पदों की श्लिष्टता की बानगी दिख पड़ती है, और न इसकी क्लिष्टता से ही पाठकों का मन ऊबता है। दण्डी के द्वारा प्रयुक्त पद 'सुप्रयुक्त' हैं, अतः इनका वाक्य ललित एवं सुव्यक्त है। शब्द-विन्यास की चारुता यहाँ देखने लायक है। पद-लालित्य वस्तुतः वहीं माना जाता है, जहाँ पद-विन्यास अनुप्रासमय एवं मनोरम रहता है। दशकुमारचरित में आनुप्रासिक चमत्कार तो पद-पद पर देखने को मिलता ही है, उसमें यदा-कदा यमकालंकार की छटा भी दिखाई पड़े बिना नहीं रहती। यथा –

'तत्र विरचितारातिसंतापेन प्रतापेन सततुलितवियन्मध्यहंसो राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो

बभूव। तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।"

यहाँ सुप्रयुक्त पदों की सुन्दरता में अनुप्रास की छटा पद-पद पर देखी जा सकती है। साथ ही 'वसुमती - सुमती', 'शेखरमणी रमणी' इस अंश में यमक की छटा भी पायी जाती है।

अब इसके अनन्तर दो-एक और वाक्य द्रष्टव्य है —

'भू वल्लभ! कुशसमिदानयनाय वनं गतेन मया काचिदरण्या व्यक्तकार्पण्याश्रु मुञ्चन्ती वनिता विलोकिता।'

'लावण्योपमितपुष्पसायक! भू नायक!! भवानेव भाविन्यपि जन्मनि वल्लभो भवतु।'

'राजहंसकुलतिलक, विहारवाञ्छया केलिवने मदन्तिकमागतं भवन्तमकाण्ड एव विसृज्य मया समुचितमिति जन्यगमनं क्रियते - तदनेन भवन्मनोरागोऽन्यथा मा भूत्।'

'कुमारः सत्वरमानेतव्यो मया। नो चेदेनां स्मरणीयां गतिं नेष्यति मीनकेतनः।'

कोमल वर्णों के प्रयोग एवं समास की अल्पता के कारण इन दोनों वाक्यों की शब्दावली अत्यन्त ही व्यावहारिक एवं श्रुति-मधुर प्रतीत होती है। इस तरह की इनकी ललित पद-योजना सर्वथा प्रशंसनीय कही जा सकती है।

यद्यपि इनके गद्य में सुबन्धु एवं बाण के गद्य की भाँति श्लिष्टता एवं क्लिष्टता नहीं है तथा इनका गद्य छोटे-छोटे समस्त पद, श्रुतिमधुर शब्दावली एवं मुहावरों के प्रयोग आदि अपनी कुछ प्रमुख विशेषताओं के लिए प्रसिद्ध है, तथापि जहाँ-तहाँ कठोर अक्षर एवं समास का बाहुल्य अवश्य ही दिखायी पड़ती है, फिर भी वह समस्तभाव से अधिक पदों के ग्रथनात्मक गुम्फनमूलक पद-लालित्य प्रौढ़-बुद्धि-सम्पन्न श्रोता को आनन्दविभोर करके ही रहता है। उदाहरणार्थ — इनका इस तरह का कुछ गद्यांश द्रष्टव्य है —

'मलयमारुतान्दोलितशाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुमफलसमुल्लसितेषु रसालतरुषु कोकिलकीरालिकुलमधुकराणामालापाञ्श्राव-

-श्रावं किञ्चिद्विकसदिन्दीवर ——————— सरांसि दर्शं दर्शंमन्दलीलया ललनासमीपमवाप ॥"

दण्डी कितने बड़े शब्द-शिल्पी थे, इसका आभास इन पंक्तियों से लग जाता है। पद-लालित्य उत्पन्न करने के लिए दण्डी ने दशकुमारचरित में एक प्रयोग और किया है। मन्त्रगुप्त के चरितवर्णन में कवि ने एक भी ओष्ठ्यवर्ण का प्रयोग नहीं किया, फिर भी कथा में कहीं अरोचकता और शैली में कठिनता नहीं है, यथा—

'आर्य, कदर्थस्यास्य कदर्थन्न कदाचिन्निद्रायति नेत्रे।' तथा—
'सखे, सैषा सज्जनाचरिता सरणि:, यदणीयसि कारणेऽनणीयानादरः संदृश्यते।'
यह पूरी तरह से नवीन चमत्कार है।
कहीं-कहीं लगता है कि दण्डी की पद मन्दाकिनी इठलाती हुई चलती है — 'स्वर्लोकशिखरोरुरुचिरत्नरत्नाकरवेलामेखलायित — ——————— भूपो बभूव।'
त्रिगर्त जनपद में पड़े हुए दुर्भिक्ष की शब्दचित्र-प्रस्तुति यों है—
"क्षीणसारं सस्यम्, ओषध्यो वन्ध्याः, न फलवन्तो वनस्पतयः, क्लीबा मेघाः, क्षीणस्रोतसः स्रवन्त्यः, पङ्कशेषाणि पल्वलानि, ——————— शून्यभूतानि नगरग्रामखर्वटपुटभेदनानि।"
पदावली यहाँ सौकुमार्य गुण से ओत-प्रोत है।

काव्य-संसार में दण्डी निस्सन्देह अनुप्रास अलंकार के एकच्छत्र सम्राट् थे। संस्कृत कवियों की कृतियों के अध्ययन के आधार पर यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि जिस मात्रा में आनुप्रासिक पदों में शब्दों की नक्काशी और पच्चीकारी की अद्भुत कला कविवर दण्डी ने प्रदर्शित की है, वह संस्कृत भाषा के अन्य कवियों से प्रायः नहीं बन पड़ी है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रसाद एवं माधुर्य गुणों से समन्वित, अनुप्रास और यमक अलंकारों से अलंकृत, पद-सौकुमार्य से भावित दण्डी की पदावली में

अतिशय लालित्य है। यद्यपि अनुप्रास और यमक के अनवरत अन्वेषण में उन्हें कहीं-कहीं दुरान्वयी अर्थ का अवलम्बन करना पड़ा है, तथापि यह बात 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः' के समान इनके सम्बन्ध में प्रचलित 'दण्डिनः पदलालित्यम्' इस लोकप्रसिद्धि में बाधक न बनकर बहुत अंश में साधक का ही काम करती है। सच पूछा जाय तो इनका यमकानुप्रासमूलक पद-लालित्य ऐसी ही जगहों पर अधिक निखरता हुआ जान पड़ता है। फलतः 'दण्डिनः पदलालित्यम्' यह कथन सर्वथा औचित्यपूर्ण है। दण्डी की इन्हीं विशेषताओं के आधार पर एक भारतीय आलोचक ने दण्डी को ही एकमात्र कवि बताया है —

'कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः।'